वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विवेकानन्द की शिक्षा दर्शन का अवलोकन

राधवेन्द्र कुमार

सहायक प्राध्यापक, रधुनन्दन टीचर्स टेनिंग कॉलेज, मठियापुर, पटना

शोध-सार

महान् भारतीय सन्त, चिन्तक एवं शिक्षाशास्त्री स्वामी विवेकानन्द का जन्म 12 जनवरी सन् 1863 ई0 की पौष संक्रान्ति हो रही थी। बंगाल प्रान्त के कलकत्ते के सिमुलिया पल्ली में प्रसिद्ध वकील विश्वनाथ के घर में, सूर्योदय के कुछ क्षण पूर्व 6 बजकर 50 मिनट पर जन्म हुआ। बचपन सें ही कुशाग्र बुद्धि के थे। सात वर्ष की अवस्था में कृतिवास की बंगाल रामायण उन्हें कण्ठस्थ कर ली थी। स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा के महत्त्व को स्वीकार किया है। यूरोप के अनेक नगरों का भ्रमण करते हुए उन्हें शिक्षा की भौतिक उपलब्धियाँ भी दिखाई पड़ी। भारत की निर्धनता का एक कारण उन्होंने अशिक्षा को माना।

शब्द कुंजी: आध्यात्मिक, तकनीकी शिक्षा, आत्मसात, भारतीय संस्कृति, समन्वयवादी दृष्टिकोण
Received : 2/10/2025 https://doi.org/10.5281/zenodo.18258942 Acceptance : 10/11/2025

स्वामीजी तत्कालीन शिक्षा-प्रणाली से दुखी थे। उनका विचार था कि उस समय की शिक्षा मनुष्य में कोई गुण उत्पन्न नहीं करती। यह मनुष्य बनाने वाली शिक्षा है ही नहीं। उसमें कोई तत्व की बात दी ही नहीं जाती। उस शिक्षा को स्वामी जी ने निषेधात्मक शिक्षा कहा है। अंग्रजी शिक्षा प्रणाली में निषेधों पर बल दिया जाता था। उसमें हाथ-पैर से काम न करने, मातृ-भाषा के प्रयोग न करने, मौलिकता प्रदर्शित न करने पर बल था। अभावात्मक शिक्षा व्यक्ति को पंगु बना देती है, उसकी मौलिकता को कुण्ठित कर देती है और उसमें मनुष्यत्व के गुणों का विकास नहीं करती। स्वामीजी का कहना था कि तमाम असम्बद्ध जानकारियों को मस्तिष्क में ठूँस देने से कोई लाभ नहीं मिल सकता बल्कि जो विचार जीवन-निर्माण में सहायक हो वहीं वास्तविक शिक्षा है। केवल कुछ विचारों को रटकर डिग्री प्राप्त कर लेना शिक्षा नहीं है। विदेशी भाषा में कुछ रटकर अपने को शिक्षित समझने की भूल शिक्षा के मूल को नष्ट करने के बराबर समझना चाहिए।

स्वामीजी के शब्दों में, '' यदि तुम केवल पाँच ही परखे हुए विचार आत्मसात कर उनके अनुसार अपने जीवन और चरित्र का निर्माण कर लेते हो, तो तुम एक पूरे ग्रन्थालय को कण्ठस्थ करने वाले की अपेक्षा अधिक शिक्षित हो। यदि शिक्षा का अर्थ जानकारी ही होता, तब तो पुस्तकालय संसार में सबसे बड़े सन्त हो जाते और विश्वकोष महान् ऋषि बन जाते। ''

वास्तव में मानव के अन्दर लौकिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार का ज्ञान मानव-मन में निहित रहता है। यह प्राय: ढका रहता है। जब धीरे-धीरे आवरण हटता है तो कहा जाता है व्यक्ति सीख रहा है। गुरु केवल प्रेरणा दे सकता है। अत: यह कहना अधिक उपयुक्त है कि बालक स्वयं अपने को सिखाता है। ज्ञान या दिव्य ज्योति इस प्रकार ढकी रहती है जैसे लोहे के सन्दूक में बन्द दीपक। पवित्रता एवं त्याग भावना से आवरण हटता है और अवरोधक समाप्त हो जाता है।

शिक्षा के सन्दर्भ में स्वामीजी का विचार:

बालक को इस प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए जिसमें उसका चरित्र का निर्माण हो, बुद्धि का विकास हो, मानसिक शक्ति बढ़े और वह अपने पैरों पर खड़ा हो सके। हमारी शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य का निर्माण करना होना चाहिए। सारी शिक्षा का अन्तिम लक्ष्य मनुष्य का विकास करना है। जिस प्रकार प्रशिक्षण से मनुष्य की इच्छा-शक्ति का प्रकाश फलदायी हो, वही दिशा है। हम मनुष्य बनाने वाले सिद्धान्त की कामना करते हैं।

शिक्षा का उद्देश्य केवल नौकरी प्राप्त करना नहीं होना चाहिए। नौकरी को शिक्षा का उद्देश्य मानने वाले छात्रों को सम्बोधित करते हुए वे कहते है, तुम्हारी शिक्षा का उद्देश्य क्या है या मुंशीगीरी करना या वकील हो जाना, या अधिक से अधिक डिप्टी मजिस्ट्रेट बन जाना, ही पर्याप्त नहीं है बल्कि वह शिक्षा जो जनसमुदाय को जीवन-संग्राम के उपयुक्त बनाती हो''

एक शिक्षा-शास्त्री की दृष्टि से स्वामी विवेकानन्द ने पाठ्यक्रम पर क्रमबद्ध रूप से एवं शास्त्रीय ढंग से विचार नहीं किया है। उन्होंने सम्पूर्ण जीवन पर विचार करते समय शिक्षा पर भी यत्र-यत्र अपने मत व्यक्त किये हैं और शिक्षा को सम्पूर्ण जीवन का एक अंश मानकर उस पर आध्यात्मिक दृष्टि से अद्‌भुत प्रेरणाप्रद सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। जिसके अन्तर्गत छात्रों के समक्ष विधायक या भावात्मक विचार रखने चाहिए न कि अभावात्मक या निषेधात्मक । देश की उन्नति के लिए जिन-जिन विषयों को पढ़ाने की आवश्यकता हो वे विषय अवश्य पढ़ाया जाएँ।

स्वामी जी धार्मिक शिक्षा देने पर भी बल दिया किन्तु आडम्बर से दूर रहने की बात कही मन्दिर, मस्ज्दि, गिरिजाघर को खिलवाड़ समझते थे। धर्म का क्रियात्मक अनुभव होना आवश्यक है। केवल बौद्धिक प्रशिक्षण से छात्रों में मनुष्यता के गुणों का प्रादुर्भाव नहीं होता। अतः विशिष्ट भावों को जाग्रत करना आवश्यक है। विद्यालयों में किसी मत या सम्प्रदाय की शिक्षा न देकर सभी धर्मो के सारभूत तत्वों की जानकारी हो जानी चाहिए। साथ ही साथ शारीरिक प्रशिक्षण पर भी ध्यान देने की आवश्यकता बतलायी। स्वामी जी ने कहा पाठ्यक्रम परिवर्तनशील होना चाहिए। विद्यर्थियों की आवश्यकता का ध्यान रखा जाए और तदनुसार शिक्षा में परिवर्तन होना चाहिए। पाठ्यक्रम ऐसा हो जो बालक को बढ़ने की प्ररेणा दें। उस समय के प्रचलित शिक्षा व्यवस्था से असन्तुष्ट थे। अतः ऐसी शिक्षा प्रदान करना जिससे विकास हो सके। इसलिए इन्होंने प्राविद्यिक, औद्योगिक एवं व्यावसायिक शिक्षा देने का विचार प्रस्तुत किया था। उनका विश्वास था कि ये शिक्षाएँ- विद्यार्थियों को आत्मनिर्भर बनाकर बेरोजगारी से बचायेंगी और दैनिक-जीवन की समस्याओं को हल करने में सहायता प्रदान करेगी। स्वामी विवेकानन्द के गुरूदेव श्री रामकृष्ण परमहंस जी प्रायः कहा करते थे कि ''खाली पेट धर्म। अतः उन्होंने क्लर्क बनने से बचने और पेट को खाली न रखने हेतु ही प्राविद्यिक, तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करने की आवश्यकता का अनुभव किया था। स्वामी जी इसी उद्देश्य से अपने आश्रम के विद्यालयों में व्यावसायिक शिक्षा, उद्योगों एवं कृषि शिक्षा की व्यवस्था की थी जो आज की वर्तमान शिक्षा-व्यवस्था में इनके विचारों को आत्मसात किया गया है।

विवेकानन्द का दार्शनिक चिन्तनः

स्वामी विवेकानन्द रामकृष्ण परमहंस के शिष्य थे। परमहंस ने इस सत्य की अनुभूति की थी कि परमात्मा आत्मा में है और आत्मा परमात्मा में है और उन्होंने इस सत्य की अनुभूति अपने शिष्य विवेकानन्द को भी कराई थी। इसके साथ-साथ श्री विवेकानन्द ने वेदों और उपनिषदों का गहन अध्ययन किया और उनके द्वारा प्रतिपादित सत्यों की जीवन में अनुभूति की थी। स्वामी जी के विचार केवल तार्किक ही नहीं हैं ।

वैदिक धर्म और दर्शन भिन्नताओं का योग है। स्वामी विवेकानन्द वेदान्त दर्शन को मानते थे । वेदान्त के भी तीन रूप हैं- द्वैत, विशिष्टाद्वैत और अद्वैत। स्वामी जी अद्वैत के समर्थक थे। इनके अनुसार द्वैत, विशिष्टाद्वैत और अद्वैत, इनमें कोई अन्तर नहीं है, ये तीनों वेदान्त दर्शन के तीन सोपान हैं, जिनका अन्तिम लक्ष्य अद्वैत की अनुभूति ही है। इतना ही नहीं, अपितु स्वामी जी तो विश्व के सभी धर्मों और दर्शनों को अन्त में अद्वैत की ओर झुका बताते थे।

धर्म और दर्शन के प्रति स्वामी जी का दृष्टिकोण बड़ा वैज्ञानिक था। इन्होंने स्पष्ट किया कि कला, विज्ञान और धर्म एक ही परम सत्य को व्यक्त करने के तीन विभिन्न साधन हैं। एक स्थान पर इन्होंने कहा कि- 'जब विज्ञान का शिक्षक यह कहता है कि समस्त वस्तुएँ एक ही शक्ति की द्योतक हैं तो क्या आपको ईश्वर की याद नहीं आती जिसके विषय में आपने उपनिषदों में पढ़ा है।' और यही तो अद्वैत वेदान्त कहता है। अद्वैत वेदान्त को ये सार्वभौमिक विज्ञान धर्म कहते थे। इन्होंने वेदान्त को आधुनिक परिपेक्ष्य में देखने-समझने और उसकी वैज्ञानिक व्याख्या करने का प्रयास किया है। यही उनके अद्वैत वेदान्त का नयापन है। इसी आधार पर इनके दार्शनिक चिन्तन को नव्य वेदान्त कहा जाता है। यहाँ स्वामी जी के

नव्य वेदान्त की तत्त्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा और आचार मीमांसा प्रस्तुत है।

मानसिक एवं बौद्धिक विकास:

स्वामी जी ने भारत के पिछड़ेपन का सबसे बड़ा कारण उसके बौद्धिक पिछड़ेपन को बताया और इस बात पर जोर दिया कि हमें अपने बच्चों का मानसिक एवं बौद्धिक विकास करना चाहिए और इसके लिए उन्हें आधुनिक संसार के ज्ञान-विज्ञान से परिचित कराना चाहिए, जहाँ से जो भी अच्छा ज्ञान एवं कौशल मिले उसे प्राप्त करना चाहिए और उन्हें संसार में आत्मविश्वास के साथ खड़े होने की सामर्थ्य प्रदान करनी चाहिए।

राष्ट्रीय एकता एवं विश्वबन्धुत्व का सिद्धान्त:

स्वामी जी के समय हमारा देश अंग्रेजों के अधीन था, हम परतन्त्र थे। स्वामी जी ने अनुभव किया कि परतन्त्रता हीनता को जन्म देती है और हीनता हमारे सारे दु:खों का सबसे बड़ा कारण है। अत: जब वे अमेरिका से भारत लौटे तो इन्होंने भारत की पवित्र भूमि पर पैर रखते ही युवकों का आह्वान किया- 'तुम्हारा सबसे पहला कार्य देश को स्वतन्त्र कराना होना चाहिए और इसके लिए जो भी बलिदान करना पड़े, उसके लिए तैयार होना चाहिए। इन्होंने उस समय ऐसी शिक्षा की व्यवस्था की आवश्यकता पर बल दिया जो देशवासियों में राष्ट्रीय चेतना जागृत करे, उन्हें संगठित होकर देश की स्वतन्त्रता के लिए संघर्षरत रहे, परन्तु ये संकीर्ण राष्ट्रीयता के हामी नहीं थे। ये तो सब मनुष्यों में उस परमात्मा के दर्शन करते थे और इस दृष्टि से विश्वबन्धुत्व में विश्वास करते थे।

धार्मिक शिक्षा एवं आध्यात्मिक विकास:

स्वामी जी शिक्षा द्वारा मनुष्य के भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों पक्षों के विकास पर समान बल देते थे। इनका स्पष्ट मत था कि मनुष्य का भौतिक विकास आध्यात्मिकता की पृष्ठभूमि में होना चाहिए और उसका आध्यात्मिक विकास भौतिक विकास के आधार पर होना चाहिए और ऐसा तभी सम्भव है जब मनुष्य धर्म का पालन करे। धर्म को स्वामी जी उसके व्यापक रूप में लेते थे। इनकी दृष्टि से धर्म वह है जो हमें प्रेम सिखाता है और द्वेष से बचाता है, हमें मानवमात्र की सेवा में प्रस्तुत करता है और मानव के शोषण से बचाता है और हमारे भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार के विकास में सहायक होता है। स्वामी जी मनुष्य को प्रारम्भ से ही ऐसे धर्म की शिक्षा देने पर बल देते थे। इनकी दृष्टि से ये सब गुण हमारे अद्वैत वेदान्त धर्म में है, यह संसार में एकत्व भाव की अनुभूति कराता है और सबसे प्रेम करना सिखाता है। इनकी दृष्टि से संसार के अन्य धर्म भी कुछ ऐसी ही शिक्षाएँ देते हैं पर उन सबमें हमारा भारतीय वेदान्त धर्म सर्वश्रेष्ठ है। अत: हमें प्रारम्भ से ही उसकी शिक्षा देनी चाहिए। साथ ही बच्चों को जीवन के अन्तिम उद्देश्य मुक्ति की प्राप्ति के लिए प्रारम्भ से ही ज्ञानयोग, भक्तियोग अथवा राजयोग की ओर उन्मुख करना चाहिए। इनकी दृष्टि से वास्तविक शिक्षा वही है जो मनुष्य को भौतिक जीवन जीने के लिए और आध्यात्मिक मुक्ति प्राप्त करने के लिए तैयार करती है।

वर्तमान समय में स्वामी जी के शिक्षा-दर्शन की प्रासंगिकता:

जिस प्रकार स्वामीजी का जीवन-दर्शन विस्तृत एवं समन्वयवादी है, उसी प्रकार उनका शिक्षा दर्शन भी है। वे वर्तमान शिक्षा प्रणाली के कटु आलोचक और व्यावहारिक शिक्षा के प्रबल समर्थक थे जिसकी आज की परिस्थितियों में अत्यन्त आवश्यकता है। आज जबकि भारत या पूरा विश्व मूल्यों को खो देने के कगार पर है हमें विवेकानन्द की आध्यात्मिक शिक्षा की ही आवश्यकता है।

प्रचलित शिक्षा के स्थान पर स्वामीजी भारत के लिए किस प्रकार की शिक्षा चाहते हैं, इस सम्बन्ध में उनके निम्नलिखित शब्द उल्लेखनीय है-''हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है, जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है, मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है, बुद्धि का विकास होता है और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो पाता है।'' आज नवयुवको में उत्तम चरित्र के निर्माण की अत्यन्त आवश्यकता है।

आज नवयुवको के समक्ष सबसे मुख्य समस्या बेरोजगारी की है। नवयुवको के पास विभिन्न शैक्षिक डिग्रियाँ होने पर भी रोजगार नहीं मिल पाता है। इसका हल स्वामीजी ने आज से लगभग सौ वर्ष पूर्व ही खोज किया था। इस सम्बन्ध में स्वामीजी ने कहा है कि उच्च शिक्षा के बजाय यदि तकनीकी शिक्षा प्रदान की जाय, तो लोग उससे रोटी पा सकेंगे तथा नौकरी-नौकरी

की चिल्लाहट से बचकर समाज में रचनात्मक योगदान दे सकेंगे। उनके इस कथन वर्तमान समय में भी प्रासंगिकता है।

स्वामीजी ने नारी-शिक्षा की महती आवश्यकता बताकर उन्हें सजग एवं विवेकी बनाने का बीड़ा उठाया। उसी सिद्धान्त को आधार मानकर वर्तमान में नारी-शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है जिससे नारियों में जागृति आई जो वर्तमान समाज की मांग है।

शिक्षा दर्शन का मूल्यांकनः

स्वामीजी के जीवन-दर्शन के समान उनके शिक्षा-दर्शन में भी हमें समन्वयवादी दृष्टिकोण की झलक मिलती है। शिक्षा के विभिन्न अंगों के सम्बन्ध में अपने विचारों को व्यक्त करते हुए उन्होंने यह बताने का प्रयास किया है कि चिन्तन और क्रिया में किसी प्रकार का विरोध नहीं है। दूसरे शब्दों में ज्ञान, कर्म और भक्ति का पारस्परिक सम्बन्ध है। स्वामी जी शिक्षा-प्रणाली में आमूल परवर्तन करना चाहते थे। उन्होंने एक ऐसी राष्ट्रीय शिक्षा संस्था स्थापित करने का संकल्प व्यक्त किया था जिस पर विदेशी चिन्तन तथा संस्कृति का प्रभाव न हो। छात्र पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान को तो सीखें, परन्तु उनकी सांस्कृतिक चेतना मूलतः भारतीय ही रहे। ये समाज के निम्न स्तर के व्यक्तियों को पहले शिक्षा देने के पक्षधर थे। उच्च वर्ग की शिक्षा व सदाचार, जिसपर कि उनका तेज और गौरव निर्भर है, वह अछूतों तथा वनवासियों को भी बेरोक-टोक मिले, यही उनकी शिक्षा का मूल मन्त्र था।

स्वामीजी के शिक्षा-दर्शन से प्रभावित होकर **जवाहरलाल नेहरू** ने लिखा है- 'भारत के अतीत में अटल आस्था रहते हुए और भारत की विरासत पर गर्व करते हुए भी, विवेकानन्द का जीवन की समस्याओं के प्रति आधुनिक दृष्टिकोण था और वे भारत के अतीत तथा वर्त्तमान के बीच एक प्रकार के संयोजक थे।'

निष्कर्षः

शिक्षा के प्रति भारतीय दृष्टि कोण रखने वाले, भारतीय संस्कृति के अनन्य पोषक, समग्र क्रान्ति के अग्रदूत, नव भारत का निर्माण करने वाले, शिक्षा में राष्ट्रवाद का प्रबल समर्थन करने वाले स्वामी विवेकानन्द ने अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली का प्रबल विरोध करके और उसके स्थान पर एक नवीन शिक्षा प्रणाली वैदान्तिक साम्यवाद की भविष्यवाणी की। उनका मानव निर्माणकारी शिक्षा दर्शन शिक्षा की व्यापक एवं आधुनिक परिभाषा प्रस्तुत करना है, मानव की आध्यात्मिक व्याख्या करता है तथा भारतीय एवं पाश्चात्य वेदान्त व विज्ञान का समन्वयवादी दृष्टिकोण लोगों के समक्ष प्रस्तुत करता है; जो वर्तमान भारतीय समाज के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आज भी स्वामी जी की शिक्षा-दर्शन की महत्ता दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही है और आने वाले समय में भी इनके दर्शन को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है। उनकी शिक्षा का मुख्य ध्येय था चाण्डाल को शनैः-शनै ब्राह्मणत्व में परिवर्तन करना। अतः वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा-दर्शन की प्रासंगिकता को झुठलाया नहीं जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः

1. स्वामी विवेकानन्दः शिक्षा ।
2. स्वामी अपूर्वानन्दः युग प्रवर्तक विवेकानन्द ।
3. पाठक एवं त्यागीः शिक्षा के दार्शनिक सिद्धान्त ।
4. डॉ० रामसकल पाण्डेयः विश्व के श्रेष्ठ शिक्षा-शास्त्री
5. बी0 एल0 फारियाः आधुनिक भारत के चिन्तक